गौर तत्व-२

"वैराग्यविद्या निजभक्तियोग-शिक्षार्थमेकः पुरुषः पुराणः।
श्रीकृष्णचैतन्य शरीरधारी कृपाम्बुधिर्यस्तमहं प्रपद्ये।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ६.२५४)

श्री गौरसुन्दर की लीलाभूमि, इस नवद्वीप धाम में, इस समय आप यहाँ बैठ कर गौर लीला श्रवण कर रहे हैं, इससे पता चलता है कि श्री गौरसुन्दर की विशेष कृपा आपको प्राप्त है, आप गौरसुन्दर के बताए हुए मार्ग पर चलना प्रारम्भ कर चुके हैं।

श्रील प्रबोधानन्द सरस्वती इत्यादि महान् आचार्य बताते हैं, कि जो भी व्यक्ति इस जन्म-मृत्यु के जंजाल से निकलने की चेष्टा भी करता है, वह व्यक्ति अत्यन्त भाग्यशाली है। फिर वे उससे ऊपर जा कर बताते हैं, उससे भी भाग्यशाली वह व्यक्ति है, जो की भगवान् नारायण की, वैकुण्ठपति नारायण की उपासना में रत होता है। फिर भाग्यशाली की सीमा और बढ़ाते हुए कहते हैं, परन्तु जो नंदनंदन की उपासना में रत होता है, वह उस साधक से भी ज़्यादा भाग्यशाली है, जो वैकुण्ठपति नारायण की उपासना में रत होते हैं। अब श्रीकृष्ण की भक्ति कर रहे हैं, उसमें भी भाग्य की अलग-अलग categories हैं, divisions हैं...। जो श्रीकृष्ण के साख्य की उपासना करता है, श्रीकृष्ण का सखा बनना चाहता है, वह वैकुण्ठपति की उपासना करने से भी श्रेष्ठ है। परन्तु जो वात्सल्य भाव में श्रीकृष्ण की उपासना करते हैं, वे उनसे श्रेष्ठ हैं जो सख्य भाव में श्रीकृष्ण की उपासना करते हैं। परन्तु जो मधुर-रति में श्रीकृष्ण की उपासना करते हैं, "माधुर्य भाव" में, "गोपी भाव" में, उन्हें सर्वप्रथम श्रेणी में लिया गया है। सर्वप्रथम श्रेणी में, भाग्यशालियों की।

अब गोपीभाव की उपासना तो श्रीमन् महाप्रभु के काल से पूर्व भी की जाती थी, परन्तु यह श्लोक कौन लिख रहे हैं? श्रीपाद् प्रबोधानन्द सरस्वती। वे क्या कह रहे हैं...? कि जो मधुर-रति की उपासना करते हैं, श्रीकृष्ण की..., उनसे..., उनमें भी सर्वश्रेष्ठ वो हैं जो "राधादासी" हैं। जो राधारानी की निज सेविकाएँ हैं। वे सबसे ज़्यादा भाग्यशाली माने जाते हैं।

शास्त्रों में ऐसा वर्णन है, सारे वैकुण्ठ..., सब गोलोक के सब सुख को एक तरफ रख दिया जाए और "राधादासियाँ...", जो केवल कुंजो से..., कुंजरन्ध्रों से निहार कर राधाकृष्ण को दर्शन करती हैं, उस सारे आध्यात्मिक सुख के मुकाबले, अगर एक समुद्र है राधादासी का सुख, तो सारे सुख को इकट्ठा कर लिया जाए, तो उस समुद्र की एक बूंद के बराबर भी नहीं है। सब- नन्द-यशोदा, ललिता-विशाखा, दशरथ, हर प्रकार के गोलोक, वैकुण्ठवासी, सब के सुख को मिलाकर इकट्ठा कर दिया जाए और एक

'राधादासी', 'मंजरी' के सुख को एक तरफ रख दिया जाए, तो वो एक समुद्र के सुख के बराबर है और बाकी सब सुख मिलाकर एक बूंद के बराबर है। यह है अनर्पितचरी। यह है वो महादान जो श्री गौरांगसुन्दर प्रत्येक बद्ध जीव को देना चाहते हैं, इस कलियुग में।

यह कलियुग की कामना तो देवता हर युग में करते हैं, कि हमें कलियुग में जन्म हो क्योंकि हरिनाम ग्रहण करके हम शीघ्र ही जन्म-मृत्यु के चक्र से पार जा सकते हैं। यह प्रत्येक कलियुग में कामना होती है, परन्तु यह कलियुग... यह कलियुग की कामना..., यह कलियुग सबसे विशेष युग है जो की बद्ध जीव, सबसे गिरा हुआ जीव, माँस-हड्डी खाने वाला जीव तक, यदि सही भक्तिपथ का आश्रय ग्रहण करे, तो राधारानी के सान्निध्य में पहुँच सकता है। उस चरम-परम आनंद का अनुभव कर सकता है, जो कि नन्द-यशोदा माता, नन्द महाराज कोई भी अनुभव नहीं कर सकते।

आज श्रीगौरसुन्दर का आर्विभाव महोत्सव है। तो किस प्रकार से हम गौरसुन्दर को अपने जीवन में ला सकते हैं और गौरसुन्दर की भक्ति करें किस प्रकार से हम राधादासी बनने की ओर हम शीघ्र-अतिशीघ्र प्रगति कर सकते हैं, उसको कुछ समझने की चेष्टा करेंगे।

अब जो हम कथा आपको बताए, आप उसे महसूस करें कि यह कथा आपके सामने चल रही है। कान से नहीं सुनें, हृदय से सुनें। और कथा सुनकर अपने हृदय-पटल पर उसे उतार लें।

"यथा यथा गौरपदारविन्दे, विन्देत भक्तिं कृतपुण्यराशिः।
तथा तथोत्सर्पति हृद्यकस्मात्, राधापदाम्भोज-सुधाम्बुराशिः।।"
(श्री श्री चैतन्य चन्द्रामृत-८८, वृंदावन महिमामृत)

जिस मात्रा में गौरसुन्दर के चरणों में रति होगी..., अगर होगी, तो उतनी शीघ्र रति, राधादासी पद्वी प्राप्ति करने में भी हो सकती है। **गौरसुन्दर का चरणाश्रय किए बिना, राधादासी पदवी प्राप्त होना असम्भव है।** यह किस प्रकार से है..., आज इसे हम समझने की कुछ चेष्टा करेंगे।

श्रीगौरांग महाप्रभु २४ वर्ष प्रथम रहे थे नवद्वीप के अंदर, और अपने अंतिम २४ वर्ष रहे थे नीलाचल में, जगन्नाथपुरी में। तो हम सब जानते हैं, श्री गौरसुन्दर राधा व कृष्ण का मिलित तनु हैं। राधाभाव जो है, उन्होंने परिपूर्ण रूप से अंगीकार कहाँ किया था? जगन्नाथपुरी में। उसमें वे परम विरह की परम अवस्था में होते थे।

यह जो श्रीकृष्ण विरह उन्माद दशा है, इसका वर्णन करना और उसे समझने में श्री गौरांग महाप्रभु की शक्ति ही सहायक हो सकती है। नहीं तो इसको समझना..., ध्यान दीजिए, गौरांग महाप्रभु की लीला को समझने की शक्ति मनुष्य के बस के परे है। मनुष्य अपनी बुद्धि से गौरसुन्दर की श्रीकृष्ण विरह उन्माद दशा को..., श्रीकृष्ण विरह में जो उन्माद दशा होती है, इसको समझने के लिए, इसको वर्णन करने के लिए गौर-शक्ति अति आवश्यक है। यह जो अति-अति अद्भुत लीला है गौरांग महाप्रभु की, कृष्ण विरह उन्माद की, यह अपने नेत्रों से..., यह अपने नेत्रों से स्वयं श्री स्वरूपदामोदर व रघुनाथ दास गोस्वामी ने स्वयं अपने नेत्रों से इसे देखा है। और कुछ सूत्रों में लिपिबद्ध किया है। उसके बाद इन्हीं महान आचार्यों का अनुशीलन करते हुए, अन्य आचार्यों ने भी श्रीकृष्ण विरह उन्माद दशा का कुछ-कुछ वर्णन किया है, ताकि पाठकवृंद उसे अध्ययन कर, उसे पढ़कर आत्म-कल्याण कर सकें, स्वयं का कल्याण कर सकें। ये विषय बड़ा गूढ़ है, हर शब्द पर ध्यान देना होगा।

श्रीकृष्ण विरह उन्माद दशा..., ये क्या होती है? देखिए..., श्रीगौर सुन्दर अखिल भक्त-अवतार तनु भी हैं। श्री गौरसुन्दर हर प्रकार के रस का आस्वादन करते हैं भक्त के रूप में। केवल राधाभाव का नहीं। सख्य भाव का भी, मंजरी भाव का भी, ईश्वरीय आनंद भी। ये जो गौरसुन्दर हैं, ये परतत्व सीमा हैं। श्रीकृष्ण परतत्व सीमा नहीं हैं। नारायण परतत्व सीमा नहीं हैं। गौरसुन्दर हैं परतत्व सीमा। अंतिम सीमा परतत्व की। कृष्ण की लीला को समझना फिर भी आसान है, श्रील जगन्नाथदास बाबाजी कहते हैं। परन्तु गौर लीला..., गौर लीला के विषय में जगन्नाथदास बाबाजी कहते हैं, "इसको समझने की तो मैं अभी चेष्टा मात्र कर पा रहा हूँ। प्रारम्भ..., प्रारम्भ कर पा रहा हूँ।" और यह बात वे कब बोल रहे हैं...? मालूम? जब वे मंजरी भाव में पूरे लोक में प्रसिद्ध हो चुके थे, मंजरी भाव सिद्ध के रूप में। तब भी गौरसुन्दर की लीला को..., एक दिन की लीला को वर्णन करना अनन्तशेष के बस की बात नहीं है। ये इतनी, इतनी गूढ़ है लीला।

जब श्रीकृष्ण विरह..., गौरसुन्दर के रूप में जब श्रीकृष्ण का विरह अनुभव करते हैं, राधाभाव अंगीकार करके और उसके बाद विरह के कारण जो करुण प्रेम क्रन्दन..., प्रेम क्रन्दन करुण करते हैं, वह जो आर्ति होती है, इस करुण प्रेम क्रन्दन..., क्रन्दन व आर्त को महाप्रभु का प्रलाप कहा जाता है। राधाभाव अंगीकार करके श्रीकृष्ण संग लाभ करने की चेष्टा के लिए, जो करुण क्रन्दन व आर्त है, इसको प्रलाप कहा जाता है।

जब गौरसुन्दर नवद्वीप में थे, तो प्रारम्भ में उन्होंने कोई भाव अंगीकार नहीं किया हुआ था, न कृष्ण भाव, न राधाभाव। कोई भाव अंगीकार नहीं किया था। अंतिम परिपेक्ष में

नवद्वीप लीला में उन्होंने राधा-राधा, गोपी-गोपी, इस प्रकार से वर्णन करते थे। तो कुछ नवद्वीप के विद्वान वृंद कहते थे, "अरे! आप तो भक्त हो। आपको तो कृष्ण-कृष्ण करना चाहिए। आप गोपी-गोपी क्यों करते हो?" तो गौरांग महाप्रभु ने इस सब कुछ ध्यान रखते हुए सन्यास ग्रहण किया था, ताकि सामान्य जीव उनकी असामान्य अवस्था को नहीं समझेगा, तो अपराध करेगा। तो गौर सुन्दर ने सन्यास ग्रहण किया इसी परिपेक्ष में।

सन्यास ग्रहण करने के उपरान्त जब नीलाचल में, जगन्नाथ पुरी में, श्रीमन् महाप्रभु रहें, तो हर समय क्या होता था उनकी जिह्वा पर? हा कृष्ण। हा कृष्ण। हा कृष्ण... हा गौर। हा गौर। हा गौर। हम करते हैं? और गौर क्या करते थे? हा कृष्ण। हा कृष्ण, कृष्ण कहाँ हो..., कृष्ण कहाँ हो...। हर समय कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण... हे कृष्ण, कहाँ हो? हर समय उनके दिव्य मंगल विग्रह के अंदर राधाभाव ही देखा जाता था। गौर का विग्रह जो है, दिव्य मंगल विग्रह है। इसमें हर प्रकार का मंगल है तो सूचित होता है हर प्रकार के भक्त भाव होता है, परंतु नीलाचल में परिपूर्ण रूप से राधाभाव श्रीमन् महाप्रभु ने अंगीकार किया हुआ था। और सदा अपने मुख से महाप्रभु बस यही बोलते थे..., उनके साथ कौन होते थे, उनके संगी? राय रामानंद व स्वरूप दामोदर। इनको क्या बोलते थे? ये नहीं बोलते थे राय रामानंद..., हमेशा राधाभाव में, "हे सखी! हे सखी, मैं क्या करुँ? मैं कहाँ जाँऊ? श्रीकृष्ण कहाँ हैं? मेरे प्राणनाथ, मुरलीमनोहर? मेरे कृष्ण मुझे कहाँ दर्शन देंगे?" हर समय हा कृष्ण..., हा कृष्ण..., "हे सखी, मुझे मेरे कृष्ण से मिला दो।" बस यही आर्त स्वर..., क्रन्दन चलता था। जिस हिसाब से हम सोच रहे हैं, वैसे नहीं था। आगे हम चर्चा करेंगे तो मालूम चलेगा कैसे था।

ऐसा प्रतीत होता था कि श्री गौरसुन्दर एक, एक पुरुष नहीं हैं, बस वियोगिनी राधा ही हैं, जो हर समय कृष्ण के वियोग में बस क्रंदन ही करती जा रही हैं। जब श्रीकृष्ण मथुरा चले गए थे, तो राधारानी ब्रज में रह कर हर समय क्या करती थी? क्रन्दन-क्रन्दन-क्रन्दन-क्रन्दन और क्रन्दन। और कोई विषय नहीं था। वास्तव में भक्त का जीवन भी ऐसा ही होता है। कैसा होता है? जैसे की पति पराए देश चला गया हो, तो जो निष्ठावान् पत्नी है, एकनिष्ठ पत्नी है, वह हर समय क्या करेगी? पति की याद में उसको सोच कर ही, बस क्रन्दन करती रहेगी। न उसे खाने में रुचि होगी, न अच्छे कपड़े पहनने में, न गहने डालने में, न किसी और चीज़ में। किसी चीज़ में रुचि रहेगी उसकी? ठीक उसी प्रकार से श्री गौरांग महाप्रभु..., न कुछ खाने का होश, न सोने का होश, कपड़े हैं या नहीं..., किसी प्रकार का कोई होश नहीं रहता। तो..., हा कृष्ण..., हा कृष्ण करते-करते किसी तरह, तड़पते-तड़पते सारी रात बीत जाती थी। और स्वरूप

दामोदर व रामानंद राय सारी रात कुछ न कुछ कथा कर-कर के..., कर-कर के रात को बिता देते थे।

तो यह एक दिन का चित्रण है। कि महाप्रभु..., किसी प्रकार से रात काटी..., क्योंकि महाप्रभु को संभालना लगभग असम्भव होता था, स्वरूप दामोदर व रामानंद राय के लिए भी।

तो सुबह उठे, तो बहुत प्रयत्न किया स्वरूप दामोदर ने, कि महाप्रभु का जो भाव है वो चलायमान हो, बदले। अनेक प्रकार की चेष्टाएँ करी कि भाव बदले, पर भाव बदला नहीं बिल्कुल भी। महाप्रभु के समक्ष जगदानन्द पण्डित आए, उन्होंने प्रणाम किया। महाप्रभु की आँखे खुली हैं, परन्तु उनकी ओर देख कर भी देख नहीं पा रहें। उनके कान में, उनके कर्ण द्वारों में कुछ सुनाई नहीं दे रहा। स्वरूप दामोदर ने बोला, "हे महाप्रभु, आपके रघुनाथदास आए हैं, वो आपको प्रणाम कर रहे हैं।" परन्तु महाप्रभु क्या हैं...? कि उन्हें कुछ सुनाई नहीं दे रहा, उन्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा। यह है एकनिष्ठा, अपने इष्ट की प्राप्ति में जब कोई होता है, न उसे कुछ दिखाई देता है, न कुछ सुनाई देता है...। अरे! दिखाई-सुनाई तो छोड़िए, जो मंजरी भाव के वास्तविक उपासक हैं, वे तो श्रीकृष्ण को भी नहीं पसंद करते बिना राधारानी के।

इस संसार के रसगुल्ले-गुलाब जामुन में एक सामान्य साधक पिस जाता है। बहुत ही शोक और शर्म का विषय है यह। धन के लोभ में...। **इष्टनिष्ठा के बिना, इष्ट की प्राप्ति हो ही नहीं सकती।** त्रिकाल में नहीं हो सकती। इष्टनिष्ठा के बिना इष्ट की प्राप्ति। जो इष्टनिष्ठ हैं, हम मंजरी भाव के उपासक, न तो कभी वे सीता-राम की उपासना में जाऐंगे..., न वे नृसिंह भगवान् की उपासना करेंगे..., न वे किसी और देवी-देवता की उपासना में रत होंगे। नारायण के भी किसी और रूप की ओर वे आकर्षित नहीं ...। नारायण को छोड़िए, वे श्रीकृष्ण को भी नहीं चाहेंगे, अगर श्रीकृष्ण साक्षात् आ कर, उनके सामने विराजमान हो जाएँ। क्योंकि राधा-कृष्ण के सेवा विग्रह हैं-मंजरी।

तो महाप्रभु के समक्ष जब सुबह आए, जगदानन्द पण्डित, रघुनाथदास गोस्वामी, उन्हें प्रार्थना कर रहे हैं स्वरूप दामोदर, कि इनको दर्शन तो दीजिए। देखिए आपके दर्शन के लिए आएँ हैं। तो महाप्रभु कोई जवाब नहीं दे रहे। महाप्रभु बस आँखें नीचे कर के क्या कर रहे हैं? जो वे पहले कर रहे थे - क्रन्दन, क्रन्दन और क्रन्दन। नीचे कीचड़ जमे जा रहा है, कीचड़ बढ़ता जा रहा है..., बढ़ता जा रहा है..., क्रन्दन वैसा नहीं होता था जैसे हम..., एक बूँद वाला आँसू..., नहीं! पिचकारी निकलती थी, गौरांग महाप्रभु के नेत्रों

से..., पिचकारियाँ..., सामने वाले व्यक्ति पूरे भीग जाते थे, जैसे कि स्नान करके आए हैं। ऐसा क्रन्दन महाप्रभु का निरन्तर चलता जा रहा था और साथ में उनके होंठ भी चल रहे थे। होंठ चल रहे हैं..., ऐसे स्पष्ट पता चल रहा है कि वे अपने प्रियतम का नाम ले रहे हैं।

कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण।

बार-बार नाम ले रहे हैं..., नाम ले रहे हैं..., नाम ले रहे हैं..., क्रन्दन कर रहे हैं..., क्रन्दन कर रहे हैं..., अगर ये काफ़ी नहीं हुआ तो, दीर्घ श्वास ले-लेकर, ले-लेकर..., इस प्रकार हो रही है कि मालूम, ऐसा लग रहा है स्वरुप दामोदर को कि अब महाप्रभु बच नहीं पाऐंगे।

महाप्रभु जब कृष्ण विरह में, उन्माद में होते थे, तो बस लगता था अभी प्राण विसर्जन कर देंगे। तो जो उनके सखा हैं, जिनके प्राण उनमें हैं, साथी हैं स्वरुप दामोदर, राय रामानंद, वे इतनी चेष्टाएँ करते रहते थे, प्राण से उत्पन्न चेष्टाएँ... कि किसी तरह महाप्रभु को आज का दिन कटवा दें।

जैसे-जैसे समय बीत रहा है, कौन सा समय है ये...? सुबह का..., सुबह का जैसे-जैसे समय बीत रहा है, महाप्रभु का विरह और बढ़ता जा रहा है..., विरह बढ़ता जा रहा है, श्वासें बढ़ती जा रही हैं, लम्बी-लम्बी दीर्घ श्वासें। कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण नाम चल रहा है, किसी की ओर देख नहीं रहे। कुछ नित्य-कृत्य अभी सुबह का कुछ भी नहीं किया, स्नान और आहार तो बहुत... दूर की बात है। कुछ स्नान नहीं, कुछ आहार नहीं, कुछ नित्य कृत्य कुछ भी नहीं किया।

तो स्वरुप दामोदर, ललिता सखी हैं। उन्होंने एकदम से एक चंडीदास का पद गाया। क्या पद है वो...?

"कहाँ भई अन्तर व्यथा राधा के मन माही,
बैठी निर्जन भवन में, कहत सुनत कुछ नाही।।"

'कहाँ भई अंतर व्यथा राधा के मन माही', ऐसी क्या व्यथा है, जो राधा के मन में है...? निर्जन में बैठी हैं। *'कहत सुनत कुछ नाही'*, कुछ कहती नहीं हैं, कुछ सुनती नहीं हैं। यह पद चंडीदास का गाया, स्वरुप दामोदर ने। यह सुनते ही गौरचंद्र चमक उठे। इष्ट को किस प्रकार से सेवा करना है, स्वरुप दामोदर से सीखना चाहिए। स्वरुप दामोदर कौन हैं? ललिता सखी। और हम उनकी परम्परा में हैं। ललिता सखी के

आनुगत्य में हैं, हम प्रणाली अपनी देखेंगे। तो सीखना चाहिए, उस समय क्या सेवा उपयुक्त है। उन्होंने पद गाया, पद सुनते ही गौरचंद्र चमक उठे। उन्होंने कहा अपने प्रेम विस्फारित नेत्रों से..., नेत्र किस के बने हैं? प्रेम के बने हैं। विग्रह किसका है पूरा? प्रेम का बना हुआ।

"Embodiment of Divine Love", गौर सुन्दर।

तो अपने प्रेम विस्फारित नेत्रों से, इधर-उधर देखें और रोते-रोते गिड़गिड़ाते हुए, ललिता सखी यानि कि स्वरुप दामोदर के पास पँहुचे और बोले, "हे स्वरुप, मुझे मेरे प्राणवल्लभ के पास ले चलो। मैं और ऐसे जीवित नहीं रह सकता।" स्वरुप दामोदर अब क्या करें? उन्होंने बोला, "हाँ-हाँ प्रभु अवश्य। आइए मैं आपको आपके प्राणवल्लभ के पास ले चलता हूँ।" स्वरुप दामोदर हमेशा ऐसे करते थे, नहीं तो प्राण रहेंगे नहीं, तत्क्षण प्राण विसर्जन कर देंगे महाप्रभु।

अब भगवान् जो हैं, उनके अंश के अंश के अंश जो शेष हैं, अनंतशेष हैं, वे अनंत ब्रह्माण्डों को धारण करते हैं। कहाँ पर? अपने hoods, अपने फनों के ऊपर। और यहाँ पर महाप्रभु परतत्व की सीमा हैं, उनकी क्या अवस्था है? कि वे खड़े भी नहीं हो पा रहे। वे खड़े नहीं हो पा रहे। कौन? श्रीमन् महाप्रभु। तो जब भी गौरांग महाप्रभु का या श्रीकृष्ण लीला का स्मरण करना है, तो याद रखें, भगवान् भाव में कभी नहीं करना।

हमारे गौरसुन्दर खड़े नहीं हो पा रहे। तो वे बाँए व दाँए ओर से ललिता और विशाखा यानि कि स्वरुप और राय रामानंद के कंधो पर हाथ रखकर, चलने का प्रयत्न कर रहे हैं..., चलने का। किसी तरह थोड़ा आगे तक ले कर गए, तो महाप्रभु ने क्या देखा आगे? कि एक पुष्प वाटिका है। पुष्प वाटिका देखते ही श्रीमन् महाप्रभु ने हाथ छुड़ाया ललिता-विशाखा से और भागने चले। दौड़ पड़े, क्या सोच कर? कि यह क्या है? वृंदावन है यह। भागने लगे। छोड़ो मुझे, वृंदावन आ गया। तो यह देखते ही उनके संगियों को महाप्रभु के..., उनके पीछे भागना पड़ा कि उन्हें किसी तरह पकड़े। बगीचे में पहुँचे तो महाप्रभु ने बोला, "देखो वृंदावन तो मैं आ गया, अब फटाफट, एकदम जल्दी मुझे मेरे प्राणवल्लभ से मिला दो", स्वरुप दामोदर की पहली समस्या क्या थी? कि उनकी प्राण रक्षा करना। दूसरी, उनको लेकर चल रहे हैं। तो अब महाप्रभु बोल रहे हैं, "अब तो मेरा वृंदावन आ गया, अब तो एक ही कमी है, मुझे मेरे प्राणवल्लभ से मिलाओ।" ये बात बोली तो स्वरुप दामोदर और राय रामानंद एक-दूसरे की ओर देख रहे हैं, अब क्या करें? अब कैसे महाप्रभु..., अब क्या जवाब देंगे।

श्री कृष्ण कहाँ हैं? और यह सुनकर बस गौरांग महाप्रभु रासपञ्चक अध्याय से एक श्लोक उच्चारण करते हैं, और कहते हैं कि अनेक फूलों का उदाहरण देते हुए कहते है कि..., "आप सब फूलों ने, जैसे कि - पणक, प्रयाल, वसंत, जम्ब, अर्क, पिक व बकुल, आम्र इत्यादि... हे कदम्ब! आप सब फूलों ने तो जन्म ही दूसरों के कल्याण के लिए लिया है। तो कृपा करके आप मुझे यह बताएँ कि मेरे प्राणवल्लभ कहाँ मिलेंगे?" सर्वप्रथम किससे पूछ रहे हैं? फूलों से। कि, "मेरे प्राण वल्लभ कहाँ मिलेंगे?" और प्रत्येक वृक्ष से ऐसे जिज्ञासा करे जा रहे हैं, "श्रीकृष्ण कहाँ हैं? मेरे प्राण वल्लभ कहाँ हैं?" परन्तु उत्तर कुछ भी नहीं मिल रहा। तो महाप्रभु को उत्तर जब नहीं मिला, महाप्रभु को..., तो वे सोचने लग गए कि, "जो पेड़ हैं न, वृक्ष हैं, ये पुरुष जाति के हैं। तो पुरुष क्या जाने स्त्रियों का जो दुःख है, जो विरह है, उसको पुरुष क्या जानें। तो मैं गलत लोगों से पूछ रही हूँ। मुझे स्त्री जाति के वृक्षों से पूछना चाहिए।" फिर तुलसी देवी, मालती, यूथी, माध्वी, मल्लिका..., इन वृक्षों से महाप्रभु ने पूछना शुरु किया। "हे सखी, तुम तो मेरी सखी हो। स्त्री जाति की हो न। तो तुम तो मेरी सखी हो। तुम तो मेरा विरह समझती हो। श्रीकृष्ण ने तुम्हें अवश्य यहाँ पर दर्शन दिए होंगे। तो कृपा करके, मुझे भी मेरे प्राणवल्लभ का पता बता दो।" स्त्री जाति के वृक्षों से श्रीमन् महाप्रभु पूछ रहे हैं। अब वहाँ से उत्तर नहीं आया, तो कृष्ण किस के पास गए? तुलसी महारानी के पास। "सखी, तुम..., तुम्हारे..., तुम्हारे पत्रों की माला पहन कर तो भ्रमरगण श्रीकृष्ण के आगे पीछे घूमते रहते हैं। आज भी पहनी होगी तुम्हारी, तुम्हारे से बनी हुई माला। तो बताओ..., वह भ्रमरगण तुम्हारी माला पर भिनभिनाते हुए कहाँ गये हैं? तुम तो बताओ। तुम तो मेरी सखी हो। तुम तो गोविंद चरणप्रिय हो, कृष्ण तुम्हें कभी त्याग नहीं करते, तुम तो बताओ मुझे।" अब तुलसी देवी से भी जवाब नहीं आया..., तो गौरसुन्दर सोचने लगे, "ये सब कृष्ण की दासियाँ हैं। ये तो कृष्ण के भय से डरती हैं..., ये मुझे भला उनका पता क्यों बताने लगीं?"

पहले वृक्षों से उन्हें उत्तर नहीं मिला, तो उन्होंने सोचा कि, "हाँ, ये तो पुरुष जाति के हैं।" अब स्त्री जाति से उत्तर नहीं मिला, "हाँ ये तो दासियाँ हैं, ये भय से डरती हैं। ठीक है, तो मैं किससे बात करूँ।" मृगी..., deer..., तो मृगी के यूथ से पूछने लगे कि, "श्रीकृष्ण राधारानी के साथ..., तुम्हारे पास ज़रुर आएँ होंगे। और श्रीकृष्ण ने अपने दर्शन देकर तुम्हारे नेत्रों को ज़रुर आनंद दिया होगा। तो हे मृगी, कृपा करके मुझे भी मेरे नयनानंद श्रीकृष्ण के दर्शन करवाओ।" मृगों से पूछ रहे हैं। और बहुत ध्यान से..., "कृपा मुझे दर्शन...", कान लगा के। जब मृगों से कोई उत्तर नहीं मिला और एकदम से चौंक कर मृग भाग गए..., तो महाप्रभु और प्रलाप करने लग गए। और निराश होकर..., और

कोई नहीं मिला उन्हें तो भ्रमरगण से प्रार्थना करने लगे। "हे भ्रमरगण, आप तो श्रीकृष्ण के माला के पीछे भागते हो हमेशा। तो जो बलराम जी के भईया हैं, वे अपनी प्राण प्यारी के साथ किस ओर गए हैं, बस मुझे यह बता दो।" अब उत्तर तो प्राप्त फिर से नहीं हुआ। तो महाप्रभु से अब बिल्कुल सहन ही नहीं हुआ, बिल्कुल सहन नहीं हुआ। इस समय महाप्रभु कहाँ पर हैं? समुद्र के पास, नीलाचल में। तो जब उनसे कुछ भी उत्तर कहीं प्राप्त नहीं हुआ, तो वे अपना देह विसर्जन करने के लिए समुद्र की ओर भाग पड़े। और पीछे कौन हैं? राय रामानंद, स्वरूपदामेदर...।

तो जैसे ही समुद्र, उन्होंने देखा; समुद्र नहीं है, उन्हें यमुना लगी और यमुना की ओर वे जाने लगे, यह सोचकर कि यहाँ पर ही श्रीकृष्ण होंगे। तो दौड़े-दौड़े जैसे ही जाने लगे, उन्हें एक कदम्ब का वृक्ष दिखा और लगा इसी के नीचे श्रीकृष्ण खड़े हुए हैं। तो थोड़ी सांत्वना हुई, कि अंततः मुझे श्रीकृष्ण के दर्शन हो गए और श्रीकृष्ण के दर्शन से मेरा मन और मेरे नयनों को आनंद मिल रहा है, उन्हें ऐसा लगने लगा, और जैसे ही उन्हें यह लगने लगा, उन्हें प्रेम की मूर्छा आ गई। जब तक नेत्र खुले हैं, चेतना है, तब तक वे संभाले नहीं संभल रहे। अब मूर्छा आ गई, तो ऐसा लग रहा है, कि प्राण शायद त्याग चुके हैं। अब ये सोचिए राय रामानंद, स्वरूप दामोदर की क्या अवस्था होती होगी उस समय...। हर क्षण..., मुझे इनकी सेवा करनी है, भगवान् की। ये अपने आप से बच नहीं सकते। अब, एकदम मूर्छा में हैं, तो स्वरूप दामोदर, राय रामानंद ने श्रीकृष्ण नाम कीर्तन शुरु किया उनके कानों में...

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे...।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे...।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे...।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे...।

जैसे ही महाप्रभु ने यह कीर्तन सुना, तो धीरे-धीरे प्रेमावेश में उठकर बैठ गए और इधर-उधर देखने लग गए। चकित नेत्रों से..., "अभी तो मुझे मेरे प्राणवल्लभ के दर्शन हुए थे, अब वे कहाँ चले गए हैं...", आप सोचिए प्रत्येक क्षण उनकी अवस्था क्या है..., हर क्षण। तो उन्होंने बोला राय रामानंद को, जो विशाखा सखी हैं..., जब भी श्रीकृष्ण के बारे में राधारानी ने कोई बात करनी होती थी, तो किसको बोलती थी, ज़्यादा? विशाखा सखी को। उन्होंने विशाखा सखी, यानि की राय रामानंद को बोला, "हे सखी! मदन मोहन श्रीकृष्णचंद्र, जो नवजलधर की कांति के समान उनकी कांति है, उन्होंने तनिक पीले रंग की ऐसी धोती डाली है, जो बिजली की भांति चमकती है। अभी वही, मेरे मदनमोहन,

श्यामसुन्दर, मोर मुकुट धारण करके, वैजयन्ती माला धारण किए, वंशी बजा रहे थे, मैंने अभी उन्हीं श्यामसुन्दर के दर्शन किए हैं, और यही श्यामसुन्दर मेरे नेत्रों का आनंद बढ़ा रहे थे। अब-अब-अब... वे कहाँ गए? अब कहाँ गए मेरे श्यामसुन्दर...?"

तो जब राय रामानंद को यह कथा सुना रहे थे, तो राय रामानंद व स्वरुप दामोदर जो अंतरंग भक्त होते थे, वे सिर्फ एक ही बात करते थे, वे जितना भी प्रलाप करते थे, वो किसी तरह बैठ के बस सुनते, सुनते और सुनते। सुनने के अलावा कुछ कर नहीं सकते। क्योंकि प्रलाप बढ़ता ही जाता था, बढ़ता ही जाता था। फिर जब ये खत्म हुआ तो बोले, महाप्रभु बोले, "हे सखी! श्रीकृष्ण जो हैं, वे अद्भुत मेघ स्वरुप हैं। नीलकांति हैं, नील मेघ हैं। वो अद्भुत मेघ स्वरुप हैं और मेरे जो नेत्र हैं, वे चातक पक्षी के समान हैं। तो मैं तो उनके दर्शन करके, पान करके, जीवित रह रही थी। कृष्ण मेघ रुपी पान कर रही थी, मेरे चातक रुपी नेत्र। तो अब श्रीकृष्ण की लीला वर्षा से तो चौदह (१४) भवन अभिसिंचित हो रहे हैं, परन्तु मेरा दुर्भाग्य तो देखो, मेरा दुर्भाग्य तो देखो, कि मुझे दर्शन हुए, जो कि चौदह लोकों में सबको हो रहे हैं, परन्तु मेरा भाग्य इतना खराब है, कि वे फिर से ओझल हो गए, मेरे नेत्रों से।" इस प्रकार से प्रलाप करते-करते, करते-करते..., अनेक प्रकार के प्रलाप करते जा रहे हैं और उनका अंग-प्रत्यंग जो है, प्रेम में बिल्कुल विह्वल हो रहा है।

तो अब तक जो थे, श्रीमन् महाप्रभु, श्रीकृष्ण के दर्शनानंद में बिल्कुल मग्न थे। बाह्यज्ञान उन्हें बिल्कुल नहीं था, कि साथ में कौन हैं, किसी प्रकार का ज्ञान नहीं था। तो किसी प्रकार से श्रीकृष्ण..., श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु, फिर से सामान्य दशा प्राप्त करें, तो यह सोचकर गीतगोविंद गाया स्वरुप दामोदर ने। गीतगोविंद का पहला श्लोक गाया, जिसमें ये बताना चाह रहे हैं स्वरुप दामोदर, कि श्रीकृष्ण कहीं गए नहीं हैं, वे कहाँ पर हैं? वे रास लीला में ही हैं।

"रासे हरिमिह विहित विलासम।
स्मरति मनो मम कृत परिहासम्।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत अंत्य लीला १५.८४)

यह श्लोक गाया, फिर उसके बाद एक श्लोक और गाया। तो जैसे ही श्लोक गाने लगे, श्रीमन् महाप्रभु..., अष्टसात्विक विकार उनके देह में आने लगे और वे नृत्य करने लगे। जैसे-जैसे श्लोक पढ़ रहे हैं, वैसे-वैसे नृत्य बढ़ता जा रहा है, बढ़ता जा रहा है। और नृत्य भी कैसा होता था, कि पांव जो हैं, हाथ तक छूते थे। आप सोचिए, आप ऐसा

नृत्य कर रहे हैं, आपके पांव नौ (९) फुट ऊपर जाकर आपके हाथ को छू रहे हैं और जितना श्लोक पढ़ते जा रहे हैं, कीर्तन-नृत्य उतना और बढ़ता जा रहा है।

अब दो (२) श्लोक गाए केवल स्वरूप दामोदर ने। फिर उन्होंने सोचा और आगे नहीं गाएंगे। गाए तो महाप्रभु के शरीर का क्या होगा, यह कल्पना से परे होगा। उन्होंने श्लोक गाने बंद कर दिए। परंतु महाप्रभु तो अपने परम परिपूर्ण राधाभाव में उस समय हैं। महाप्रभु कहते हैं, "गाओ, गाओ...।" जबकि कुछ भी नहीं हो रहा, सब एकदम चुप हैं। "गाओ, गाओ और गाओ। और गाओ..., और गाओ।" इस प्रकार से चलता रहा और किसी तरह भक्तों ने महाप्रभु को..., गौरहरि को घेरा और हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल, हरिबोल करके किसी तरह उन्हें बिठाया और मुँह पर थोड़ा छींटा दिया और उनका श्रम दूर किया। और किसी तरह समुद्र स्नान कराया, आश्रम पर लेकर आए, प्रसाद ग्रहण करवाया और थोड़ा सा चेष्टा की कि विश्राम करें महाप्रभु। अब विश्राम तो क्या होगा। फिर महाप्रभु उसके बाद जगन्नाथ देव जी के दर्शन को पधारे। क्योंकि कार्य तो एक ही है, ईश्वर परम आविष्टता। अब जगन्नाथ जी के दर्शन को वे पधारे, उससे पहले कौन सा श्लोक सुना था उन्होंने? रास लीला का। कि महाप्रभु रासमंडल में हैं। तो वे जगन्नाथ जी के दर्शन कर रहे हैं और उनको दिख रासलीला रही है, जगन्नाथ जी के दर्शन में। न उन्हें और कुछ सुनाई दे रहा है, न ही दिखाई दे रहा है। तो निर्निमेष..., नेत्रों से वे रासलीला के दर्शन किए जा रहे हैं, किए जा रहे हैं। और उनको अष्टसात्विक विकार आ रहे हैं, तो स्वरूप दामोदर ने क्या किया? महाप्रभु के ठीक पीछे जा कर खड़े हो गए। राय रामानंद को इशारे से बोला, "तुम साथ में खड़े हो जाओ।" जगदानन्द पण्डित, अन्य भक्तों को बोला कि, "तुम और घेर कर खड़े हो जाओ। क्योंकि महाप्रभु कभी भी प्रेम में मूर्छित हो जाएँगे और उन्हें पकड़ना होगा।" यह होती है काल-उचित सेवा। अपने इष्ट के मन को जानना कि वे किस अवस्था में हैं और उसी अनुसार सेवा, सब आयोजित करना, नियोजित करना। तो सब भक्त खड़े हो गए आसपास और जैसे सोचा था, वही हुआ। हा कृष्ण, हा कृष्ण करते-करते प्रेम में मूर्छित होकर महाप्रभु गिर गए और फिर से उठाया स्वरूप दामोदर ने और अपने गोदी में रखा और राय रामानंद इत्यादि ने अपने कमडंलों से पानी लेकर छींटा मारने लगे और किसी तरह प्रेम मूर्छा भंग की। और स्वरूप दामोदर को, जब मूर्छा भंग हुई तो बोला फिर से, क्या बात बोले? जहाँ पर रुके थे, कहाँ पर रुके थे? रास-मंडल का दृश्य। वे बोले, "अभी तो मेरे प्राणवल्लभ के मैं रास-मंडल में दर्शन कर रहा था स्वरूप, यह क्या हो गया? श्रीकृष्ण कहाँ चले गए?" फिर से वही अवस्था, "श्रीकृष्ण कहाँ चले गए? मेरे प्राणवल्लभ कहाँ चले गए?"भीख मांग रहे हैं, गिड़-गिड़ा रहे हैं। व्याकुल हो रहे हैं। "हे स्वरूप, मुझे मेरे

प्राणवल्लभ के पास ले चलो। मैंने अभी दर्शन करे हैं। अभी-अभी दर्शन करे हैं।" और महाप्रभु को..., क्या बोल रहे हैं स्वरूप दामोदर, "हाँ-हाँ महाप्रभु चलो मैं आपको श्रीकृष्ण के दर्शन के लिए ले चलता हूँ।" मंदिर में भी यही बोला और महाप्रभु एकदम झटपट खड़े हो गए। और धीरे-धीरे करके, चला के महाप्रभु को उनके निवास स्थान पर भक्तगण फिर से ले आए किसी तरह।

यह रात्रि में, गम्भीरा में, अपने द्वार के पास बैठकर फूट-फूट के महाप्रभु रो रहे हैं। हा कृष्ण, हा कृष्ण। हा कृष्ण। और स्वरूप गोस्वामी से पूछते हैं कि, "मेरे प्राण प्यारे कहाँ हैं, मुझे उनके दर्शन कैसे प्राप्त होंगे?" स्वरूप दामोदर और राय रामानंद दोनों हैं सिर्फ, वे एक दूसरे को देखते हुए कह रहे हैं कि, "महाप्रभु! बस अभी निकुंज के अंदर हैं, अन्दर आओ हम आपको ले चलते हैं।" वो निकुंज क्या है? कि दरवाज़े से अंदर उनकी गम्भीरा में जो गुफा है, वो उसमें उन्हें अंदर ले कर जा रहे हैं। उनको लगा इसके अलावा और कोई उपाय नहीं है। फिर गम्भीरा में, अंदर कमरे में, अभी दरवाज़े पर थे, अब भीतर लेकर आए हैं..., निर्जन गुफा में बैठे हुए हैं और कई घण्टे बीत गए, एकदम निस्तब्धता, एक कुछ भी आवाज़ नहीं आ रही, बस विरह में श्रीकृष्ण का स्मरण करते जा रहे हैं और फिर इसके बाद कहते हैं कि, "हे स्वरूप! मेरे प्राण बहुत ही कठोर हैं। श्रीकृष्ण मुझे दर्शन भी नहीं दे रहे और यह मेरे प्राण फिर भी इस देह में अभी तक बचे हुए हैं। मैं तो बहुत कठोर हूँ। अब मेरे लिए जीना और सम्भव नहीं है। अब मेरा प्राण त्याग देना ही उचित है।"

सोचिए एक दिन में क्या-क्या हो रहा है स्वरूप दामोदर, राय रामानंद के साथ और महाप्रभु की क्या अवस्था है। "इस सहन करने से अच्छा तो मैं मर ही जाऊँ।" तो स्वरूप दामोदर तो काल-उचित सेवा का एक और श्रेष्ठतम् उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। "हे महाप्रभु! कृष्ण तो कभी वृंदावन छोड़कर जाते ही..., नहीं।"

"वृंदावन परित्यज्यम् पाद एकम् ना गच्छति।
पश्यामि यदा यदा यदा व्रजभावम् ना विस्मरामि।।"

(प्रभाते संगीत)

"कृष्ण तो वृंदावन में ही हैं। आओ हम आपको वृंदावन लेकर चले।" तो "ओ, हाँ, श्रीकृष्ण तो वृंदावन में ही हैं, ये मैं कैसे भूल गया? चलो फटाफट मेरा श्रृंगार कर दो।"

अब एक बात खत्म हुई, तो एक और बात। अब महाप्रभु का, गोपीवेश में श्रृंगार कौन करेगा? अब वे एक दूसरे की ओर देख रहे हैं, तो महाप्रभु ने सोचा, "अरे! मुझे श्रृंगार

की क्या आवश्यकता है? मेरे प्राण प्रियतम तो मुझे वैसे ही स्वीकार करते हैं। चलो छोड़ो हम ऐसे ही चलते हैं। तुम समय बरबाद मत करो। तुम शीघ्र-अति-शीघ्र मुझे मेरे प्राण प्रियतम के पास ले कर चलो।" तो अब..., अब क्या करेंगे स्वरुप दामोदर, राय रामानंद...। वे एक दूसरे को देख रहे हैं, "अब तुम मुझे लेकर नहीं चलोगी, तो मैं खुद ही चला जाता हूँ।" तो महाप्रभु अब भागना, दौड़ना शुरु कर रहे हैं और वे भागे जा रहे हैं आगे-आगे, तो अगर महाप्रभु को अब रोकना है, अब क्या करें, नहीं तो अब रात्रि तो हो चुकी है। अब रात्रि में क्या होगा नहीं तो, तो स्वरुप दामोदर ने एक और काल-उचित सेवा का श्रेष्ठतम् उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने बोला, "हे मेरी प्रिय सखी, हे राधे, अभी तो यह बुढ़िया जटिला जो है, यह जगी हुई है। अभी चुपचाप कमरे में सो जाओ, जैसे ही ये सो जाएगी, हम तुरन्त श्याम सुन्दर से मिलने चल पड़ेंगे।" तो यह बोल कर किसी तरह, दिन शेष किया और महाप्रभु को विश्राम कराया।

श्रीकृष्णचैतन्यमहाप्रभु की... जय।।

स्वरुप दामोदर की... जय।।

राय रामानंद की... जय।।

हम सब महाप्रभु के अनुयायियों को भी ऐसे ही एकनिष्ठ होना पड़ेगा।

"यदि गौर ना होइते, किमेने हइत, केमने धरिताम दे।
राधार महिमा, प्रेमरससीमा, जगते जानातो के?"

(महाजन)

यदि गौरांग महाप्रभु न होते, तो राधारानी की महान् प्रेम को समझना, यह संभव नहीं था। गौरांग महाप्रभु के महान् प्रेम को, राधारानी के महान् प्रेम को, हम गौरांग महाप्रभु की कृपा से ही समझ पाए और कैसे सेवा की जाती है राधारानी की, युगल की, यह स्वरुप दामोदर व राय रामानंद से हम समझ पाए।

तो जिस प्रकार से महाप्रभु क्रंदन करते रहते थे अपने इष्ट के लिए। हमें भी,

"हे राधे व्रजदेविके च ललिते, हे नन्दसूनो कुतः
श्रीगोवर्धन-कल्पपादप-तले कालिन्दीवने कुतः।
घोषन्ताविति सर्वतो व्रजपुरे खेदैर्महाविह्वलौ
वन्दे रुप-सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ।।"

(श्री श्रीषड्गोस्वाम्यष्टक ८)

इस प्रकार से हमें भी हे राधे, ललिते, अपने इष्ट की प्राप्ति के लिए, दिन-रात क्रन्दन करना सीखना होगा। यदि कोई उदाहरण न होता, तो हम शायद कभी न सीख पाते। परन्तु उदाहरण हमारे समक्ष प्रस्तुत है, इन ग्रन्थों के माध्यम से, हरिकथा के माध्यम से, हम जान सकते हैं कि गौरांग महाप्रभु की, यानि की राधारानी की, क्या अवस्था होती थी। हमारी प्राणेश्वरी श्रीमती राधिका की क्या अवस्था होती है। तो काल-उचित सेवा, यही मंजरियों का धर्म है। राधारानी की अभिन्न-देह, अभिन्न-प्राण..., तो राधारानी की क्या अवस्था होती है, यह श्रीमन् महाप्रभु के प्रलाप से, उनके गम्भीरा में रहकर..., यह तो एक दिन की कथा है। यह रोज़, दिन-रात non-stop होता था। और स्वरूप दामोदर, राय रामानंद कैसे रहते होंगे, हर समय सेवा..., सेवा करनी है। नहीं तो वे बचेंगे नहीं।

तो आशा करते हैं, आज के इस कथा के माध्यम से, आप भक्त लोगों को कुछ, अपनी साधना में प्रेरणा प्राप्त होगी और अपनी साधना में सही रूप से अग्रसर होंगे और सिद्धि को प्राप्त कर पाएंगे।

ये तो रही गौर लीला की बात, परंतु वास्तविकता यह है, कि हम इस पथ पर आ तो चुके हैं, परन्तु सिद्धि प्राप्त करने के लिए हमें अपने-अपने गुरु के ऊपर प्रगाढ़ निष्ठा रखनी है। और उनकी..., जैसे प्राणों से सेवा मंजरियाँ करती हैं राधारानी की, वैसे ही सेवा हमें अपने गुरु की करनी है।

- गुरु निष्ठा होगी तो गुरु सेवा होगी।
- गुरु सेवा होगी तो गुरु कृपा प्राप्त होगी।
- गुरु कृपा प्राप्त होगी तो गौर में निष्ठा होगी और गौर कृपा प्राप्त होगी।
- और गौर कृपा प्राप्त होगी, तो गौर कृपा से हमें अपने स्वरूप का बोध होगा व राधारानी के दर्शन व राधारानी की साक्षात् सेवा प्राप्त होगी।

तो यह क्रम है।

गुरु निष्ठा - गुरु कृपा - गौर निष्ठा - गौर कृपा।।

फिर उसके बाद राधा निष्ठा व राधारानी की साक्षात् सेवा।।

तो यह केवल..., जो गौर पूर्णिमा है, यह फिर से एक और वर्ष की तरह नहीं होना चाहिए। कि हम आए अपने गुरु के आश्रम में, कुछ नृत्य किया, कुछ कीर्तन किया और

घर गए और वैसे के वैसे हो गए। नहीं। हमें गुरुदेव को इष्ट रुप में लेना होगा, यदि हम वास्तव में भगवद् प्राप्ति करना चाहते हैं।

'ठाकुर' बोला जाता है, महान् वैष्णवों को भी, ठाकुर..., और गुरु तो साक्षात् ठाकुर करुणा का स्वरुप ही हैं। तो अपने गुरु में अचल भक्ति रखते हुए, अहर्निश, दिन-रात उनकी सेवा में संलग्न होना है। यदि होंगे, यह भक्ति जो है, यह चर्चा का विषय नहीं है यह चर्या का विषय है, अपने जीवन में लगाने का। यदि इतने सालों सुनने के बाद भी, यदि हम दिन रात गुरु की सेवा में नहीं लगेंगे, तो वो दिन कभी नहीं आएगा, जब गौर कृपा प्राप्त होगी।

प्रारंभिक रुप से गौर कृपा प्राप्त हो गई है, कि हम इस नवद्वीप धाम में, गौर लीला श्रवण कर रहे हैं रात्रि १०-११ बजे, इस समय..., तो यह गौर कृपा है, निश्चित रुप से है, प्रारंभिक, परन्तु यदि सिद्धि भी चाहते हैं, तो जीवन शैली को पूर्णरुप से बदलना ही पड़ेगा। पूर्ण रुप से, अर्ध रुप से नहीं। अर्ध रुप से कुछ प्राप्त नहीं होता। पूर्ण रुप से बदलने का पहला..., पहला step, जो पहला कदम है वो यह है - अपने गुरु की दिन-रात सेवा में स्वयं को संलग्न करना या किसी गौरकृपा प्राप्त महापुरुष की सेवा में स्वयं को संलग्न करना। इसके बिना न गौर प्राप्ति होगी, न राधा प्राप्ति होगी। इसके बिना क्या प्राप्ति होगी?

"बहु जन्मे यदि करे श्रवण कीर्तन।
तबु तो ना पाय कृष्णपदे प्रेमधन।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ८.१६)

बहु जन्म ऐसे हम श्रवण कीर्तन करते हैं, करते आए हैं, अभी तक इस भौतिक जगत में हैं, इससे सुसिद्ध होता है, कि हमने गुरु की सेवा पिछले जन्म में नहीं की सही रुप से, या गुरु महापुरुष प्राप्त नहीं हुए, या प्राप्त हुए तो हमने सेवा नहीं की। इष्ट रुप में गुरु की सेवा करेंगे तो कृपा प्राप्त होगी। हम कृष्ण की कृपा चाहते हैं, अरे! कृष्ण-कृपा की मूर्ति ही तो गुरु हैं। कृष्ण-कृपा-मूर्ति, ये गुरु का स्वरुप है, जो चाहते हो, वही तो सामने हैं। श्रील स्वरुप दामोदर बाबाजी महाराज आप लोगों के समक्ष हैं, आप कृष्ण कृपा चाहते हैं, वे मूर्तिमान स्वरुप ही आपके समक्ष हैं। जब तक दिन रात लग के, सेवा नहीं करेंगे अपने गुरुदेव की या किसी गौर कृपा प्राप्त महापुरुष की, तब तक वास्तविक रुप में प्राप्त नहीं होगा- यह कड़वा सत्य है, पर सत्य है। कड़वा है, पर सत्य है। तो आप सब

के जीवन में बदलाव आए, आपको इसी जीवन में गौर चरण व राधा चरण प्राप्ति हो, इसी कामना के साथ मैं अपने सत्र को यही विराम दूँगा।

निताई-गौर-प्रेमानन्दे।।